मनुष्य बनो

बा० मू०
२५.००

शरण

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम

निष्काम कर्म,

सत्य

...क
...याल फकीर चन्द जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २५.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय मे पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४२	जुलाई-८३	अङ्क— १०

प्रेम धारा से :

शब्द

सत्संगत में बैठे के प्राणी, सत् की संगत कर ले तू।
गुरु वचन अनमोल है हीरे, अपना दामन भर ले तू ॥
मन अपने को काबू करके, अपनी सुरत टिका ले तू।
देख नजारा अपने अन्दर, ओर सत् गुरु को पा ले तू ॥
जन्म जन्म की कोठड़ी, गुरु कृपा से ताले खोल।
झाड़ लगाकर साफ करो अब, प्रेम की जोत जगा ले तू ॥
तीसरा बिल और सहस-कमल दल, त्रिकुटी का दर्शन करलो.
दशवाँ द्वार सुन्न महल का, हंसों को प्रसन्न कर लो ॥
महा सुन्न और भंवर गुफा से, सत् लोक को चल करके।
अलख अगम अनादि पद में, काल बिछाड़ो दल करके ॥
चौथे दल में सुरत जो पहुंचे, जन्म मरण से न्यारी हो।
ऐसा देश सुदेश मिला अब, सत्गुरु की बलिहारी हो ॥
अहम् रहा नहीं रही है ममता गई क्षमता कहां।
आनन्द आनन्द आनन्द पाया, 'गाफिल' आनन्द सदा बहाँ ॥

सबसे धनी=सबसे दुखी

धन और सुख क्या-इन दोनों का परस्पर सम्बन्ध है ? जो व्यक्ति धनी है, क्या वह सुखी भी है ? जिन व्यक्तियों के पास बड़ी पूंजी, जमीन जायदाद, धन, मकान इत्यादि है, क्या वे वास्तव में आनन्दित, सन्तुष्ट, शांत भी है ? सुसज्जित मकान, सुन्दर वस्त्र, मोटर, सुस्वादु भोजन एवं धनके भरे हुये भण्डारों के स्वामी ही इस संसार का आनन्द लूट सकते हैं। ये ऐसे प्रश्न हैं जो जनमानस को उद्वेलित किया करते हैं।

धन एक साधन है, जिसके द्वारा भिन्न--भिन्न आवश्यक वस्तुयें खरीद कर हम सुख-शान्ति प्राप्त करते है। धन से वे चीजें हमारे पास आ सकती हैं, जिसके द्वारा हम स्वयं अपने और परिवार के योग्य वस्त्र, भोजन इत्यादि ले सकते हैं। लेकिन जब धन ही साध्य बन जाता हैं और मनुष्य केवल धन संग्रह को ही जीवन का लक्ष्य बना लेता हैं, तब वह एक ऐसे दुष्ट वृत्तिमें फँस जाता है जिससे उसे लाभ के स्थान पर मानसिक अशाँति प्राप्त होने लगती है। वह उसी के मोह चक्र में घूमा-फिरता और उसे बढ़ाने तथा सहेजने की चिन्ता में लगा रहता है।

हमारे नगर के एक सेठ, जिनकी अभी पिछले दिनों मौत हुई है, नगर में अपने ऐश्वर्य और धन के लिये प्रसिद्ध थे। जीवन बड़े सुख-विलास में व्यतीत हो रहा था कि वृद्धावस्था में विवाह कर लिया। धीरे-धीरे पुनः परिवार वृद्धि हुई। वृद्धावस्था में दो पुत्र पैदा हुए। उनके पोषण-शिक्षण के अतिरिक्त नई पत्नी के यौवन को संतुष्ट रखने की चिंता सवार हुई। इधर व्यापार ने रुख बदला और उधर से ध्यान

हटने के कारण भयंकर हानि हुई। कुछ जायदाद बिकने पर नौबत आ गई। अपनी प्रतिष्ठा के ह्रास की चिन्ता ने सेठजी को मानसिक रोगी बना दिया। रेहन की हुई जायदाद बिक गई। जिस दिन उन्हें मालूम हुआ कि मेरे दिवाले की बात लोगों की जबान पर है, उनका घर से निकलना दुष्कर हो गया। मानसिक रोग बढ़ता गया। एक रात हृदय की गति रुकने से अनायास उनकी मृत्यु का समाचार पत्रों में छपा। समाचार पत्रों में लिखा गया कि ५७ वर्ष की वृद्धावस्था हो ने के कारण सेठ जी की मृत्यु हो गई। किसे ज्ञात था कि कारण बुढ़ापा नहीं, प्रत्युत धन के आधिक्य से उत्पन्न मानसिक चिन्ता थी।

पंजाब के एक पूँजीपति का वृत्तान्त मुझे स्मरण हो आया है, वे महानुभाव गल्ले के व्यापारी है। लक्ष्मी की कृपा हुई तो एक साधारण स्थिति से उन्नत होते गये। स्वयं अध्यवसाय और परिश्रम से कार्य किय और शहर के एक धन-सम्पन्न व्यक्ति गिने जाने लगे। ढलती अवस्था में, व्यापार उनके पुत्रों के हाथ में आया तो शैथिल्य आ गया। लड़के सट्टा करने लगे। एक उदास और अभाग्यशाली दिन उन्होंने सुना कि सटटे का दाँव विपरीत रहा और वे सब कुछ हार गये हैं।

'मेरा सब कुछ चला गया। अब जब तक घर के मकान और दुकानें न बेची जाँय तब तक इज्जत बचना सम्भव नहीं हैं। क्या किया जाय? इस वृद्धावस्था में भी क्या यह दुःखदायी दिन देखना पड़ा था? क्या करूँ? आत्महत्या कर लूँ या कहीं भाग जाऊं? लेकिन कर्जो वाले मुझे कैसे छोड़ेंगे? ऐसी अनेक बात मन में लिये वे मुझे मिले।

धर्म की कमाई से समृद्धि

धन को हमारे यहाँ एक देवी के रूप में माना गया है। इसे हम माता लक्ष्मी कहते हैं। लक्ष्मी में देवत्व के गुणों की भावना है। जो व्यक्ति रिश्वत, काला बाजार, झूठ, कपट, चोरी करते या बिना परिश्रम की कमाई लेते हैं, वे लक्ष्मी देवी का अपमान करते हैं। जिस स्थान पर माता लक्ष्मी का अपमान हो, वे वहाँ कसे ठहर सकती है ? अतः वे उस स्थान को त्याग कर उस व्यक्ति के पास पहुँचती हैं जो सच्चाई, परिश्रम, और धर्म की कमाई करता है।

सट्टे और जुए से लोग एक रात में ही इतने अमीर होते देखे गये हैं कि आश्चर्य होता है। अहमदगढ़ (पंजाब) की एक घटना हमें याद है। एक सुनार साधारण आय से जीवन निर्वाह करता था। एक दिन दुकान के लिये सोना खरीदने वह लुधियाने गया। वहाँ देखा कि कुछ व्यक्ति सट्टा लगा रहे थे। उनका भी मन मचल उठा। जी कड़ाकर उसने भी सट्टा लगा दिया। संयोग से भारी माल हाथ लगा। सोचा कि यह पेशा सबसे अच्छा है। न मेहनत, न देर, अठगुने रुपये मिलते है। बस, दुकान छोड़कर सटटा ही लगाने लगा। भाग्य अच्छा था। हर बार जीत ही जीत होती गई। एक दिन सट्टा बाजार में गया और सब कुछ दाँव पर लगा दिया। उस दिन भाग उल्टा था, वह सब कुछ हार गया और सारी सम्पत्ति क्षण भर में विलीन हो गई। सोचा एक बार और प्रयत्न करें। पर दुबारा-तिबारा हारता ही गया। अन्ततः दुकान का सब धन स्वाहा हो गया। अब मानसिक क्लेश की भीषण यन्त्रणा में दग्ध होने लगा। एक मास पश्चात

उसका शव ही घर से बाहर निकला और वह घर वालों को गरीबी, बेबसी और ऋण में छोड़ गया।

इसके विपरीत धार्मिक कमाई के अनेक उदाहरण आपको मिल सकते हैं। जिनमें आय कम हुई, किन्तु सच्चाई, श्रम, और ईमानदारी के कारण उसी में समृद्धि और सन्तोष रहा। कबीर एक जुलाहे थे। रैदास चमार थे। इन महापुरुषों की आय कितनी होती होगी। स्वयं अनुमान लगा सकते हैं, पर उसी में उन्होंने जीवन का मजा लूटा। सुखी और मस्त रहे। गांधी जी गरीबी का, परसुख और सन्तोष का जीवन व्यतीत करते रहे। इसके अतिरिक्त सैकड़ों ऐसे श्रम, सच्चाई और ईमानदारी के उदाहरण उपलब्ध हो सकते हैं जो सात्विकता और धर्मभावना से परिश्रम करने पर प्रतिष्ठित पद पर आसीन हुये हैं।

धर्म का पैसा टिकाऊ होता है। मनुष्य उसका मूल्य समझता है तथा उससे स्थायी लाभ उठाता है। ऐसा व्यक्ति व्यसन, व्यभिचार, दिखावा इत्यादि दूर रहकर सयमी, सदाचारी जीवन व्यतीत करता है। धर्म का एक पैसा चोरी-अधर्म के हजार रुपयों से अच्छा है, क्योंकि उसमें मानसिक और आध्यात्मिक भाव है यह भय नहीं कि हमारी चोरी पकड़ी जायेगी।

अधर्म और पाप की कमाई के साथ फजूल खर्ची का आगमन होता है। मनुष्य व्यर्थ के अभिमान, अहंकार, डाह, शौक व्यसन में पड़कर अनाप-शनाप व्यय कर डालता है। झूठी शान और दम्भ के वश में पढ़कर शेखीबाज बेजरूरी चीजो को भी जरूनी बना डालते हैं।

वकालत के पेशों में स्थान-स्थान पर झूठ, फरेब, बेईमानी से काम लेना पड़ता है। वकील रुपये के कारण सत्य और मिथ्या का कोई विवेक नहीं करते। फलतः वे अमीर होते देखे जाते हैं, पर अन्त में उनकी बिलासी, भड़कीली, काम से बचने वाली संतान सारा रुपया चौपट कर डालती है। सिनेमा चलाने वालों की सन्तान दुश्चरित्र, विलासी और रोमांटिक हो जाती है। शराब बेचने वाले महाजन बहुत जल्दी अपनी मक्कारी से ऊँचे मकान खड़े कर लेते हैं, पर बच्चे शराबी बनकर सारी पूँजी नष्ट कर देते हैं। पाप की कमाई के साथ फजूल खर्ची, नशेबाजी, बुरे काम की शौकीनी प्रमाद और आलस्य आते हैं।

धर्म की कमाई ही समृद्धि का मूल मन्त्र है। यह टिकाऊ और सदा आनन्द देने वाली है। मनुष्य जानता हैं कि उसने कितने श्रम से उसे प्राप्त किया है। अतः यह उसे व्यय करने में भी संयम से काम लेता है। इस आत्मदमन और संयम से वह समुन्नत होता है।

गताँक से आगे—उनके साथ हम खेलते रहते है। यह संसार जितने भी भक्त उपासक और योगी, ज्ञानी है अपने अन्तर से ख्यालात उठा उठाकर उसके साथ अपने बाहर अन्तर में खेलते हैं और उनमें फँ से रहते हैं। खेलना और चीज है और फँसना और चीज है। दुनियां में खेलने या काम करने के बिना तो गुजारा नहीं, मगर उस खेल में फंसजाना, आसक्त हो जाना, मोह ग्रसित हो जाना, ममत्व हो जाना गलत है। हम भाई को भाई समझें, बाप को बाप समझें, मगर मोहग्रस्त या आसक्त न हों। जब तक जीवन है मन रहेगा। उसे मार नहीं सकते। उसमें खेलो मगर अपने रूप को पहिचान लो। नहीं तो साँसार के कष्टों से और जन्म मरण से बचाव नहीं है। स्वामी जी के शब्द सुनो ताकि यों न कहो कि मैं जो कह रहा हूं अपनी ओर से कह रहा हूं :—

मिली नर देह यह तुमको, बनाओ काज कुछ अपना।
पचो मत आय इस जग में, जानियो रैंन का सपना॥
देह और ग्रेह सब झूठा, भर्म में काहे को खपना।
जीव सब लोभ में भूले, काल से कोई नहिं बचना॥
....
जलोंगे आग में निस दिन, बहुरि भोगें जनम मरना।
....

इस दृष्टि से विचार करो कि जितने भक्त उपासक है. उनकी भक्ति और उपासना मन से होती है। क्या वे उसमें बचे या फँसे नहीं रहते ? आज उपास्यदेव के दर्शन हो गये तो प्रसन्न वर्ना अप्रसन्न। कभी समय था जब मैं राधास्वामी मत की पुस्तकें पढ़ता था। उनमें आता था कि यह रहस्य योगी, इन्द्र, मुनीन्द्र आदि भूल गये। मेरे कान इस वाणी

को सुनने को तैयार नहीं होते थे मगर अपने अनुभव के बाद कहे जाता हूं कि जो स्वामी जी ने कहा है वह ठीक है। अगर मेरी वर्णन शैली कठोर है तो स्वामी जी की भी कठोर है। हाँ स्वामी जी मेरी तरह समझाते तो राधास्वामी मत में झगड़े न होते। बात वहीं है। मानसिक पूजा। एक गुरु से बधा है. एक दौलत के साथ, एक राम के साथ! एक का गुरु मरा वह रोया और किसी का पुत्र मरा तो वह रोया। फिर दोनों में अन्तर क्या? कुछ नहीं। जब तक कोई इस मन के चक्र से नहीं निकलता, धर्मराज से तिनका नहीं टूटता। धर्मराज से तिनका तब टूटेगा जब तुम अपने अन्दर शब्द और प्रकाश को प्रकट करोगे, देखोगे। धर्मराज का काम है न्याय करना। यदि तुम न्याय के राज से दयाल के देश में जाना चाहते हो तो शब्द और प्रकाश के सिवाय और कोई उपाय नहीं है। यही बात गरुड़ पुराण में हैं कि पार ब्रह्म के देश और शब्द ब्रह्म के देश में वासा प्राप्त करो।

इस सिलसिले में मैं अपने आधार पर कहता हूँ कि जो लोग अच्छे आचरण वाले होते हैं और वासना रहित होकर शरीर छोडते है उनका मन बना रहता है। सन्त मार्ग मे इस अवस्था का नाम है महा सुन्न। ऐसे लोगों का सूक्ष्म, शरीर निर्वासना होता हुआ ब्रह्माण्ड में रहेगा, क्यों कि उनका शब्द और प्रकाश खुला नहीं है। ऐसे जीवों को, जो महासुन्न में रहते है वासना रहित हैं तो जब कोई सन्त उधर से जाता है चूं कि वह शब्द और प्रकाश से ब्रह्माण्ड में जाता है तो उनको अपने साथ ले जाता है। यह इसी प्रकार है जैसे छोटी बत्ती जल रही है वहाँ बड़ा बल्ब लगा दो तो वह बड़े की रोशनी में लय होकर उसका रूप हो जायगी।

ब्रह्म ब्रह्म दुनियां कहती है। ब्रह्म का अर्थ है बढ़ना और सोचना। जो प्रकाश हम में है वही घट घट में रम रहा है। यही ब्रह्म है। मुझे बताओ ऐसा कोई देश है जहां प्रकाश के बिना दुनियाँ बन रही हो? सब जगह प्रकाश ही प्रकाश है। मुझे और कोई प्रकाश दिखाई नहीं पड़ता। अतः ब्रह्ममय होने को शब्द और प्रकाश का साधन है।

तृतीय सत्संग

(हनम् कुण्डा २०-१-६४)

कल के सत्संग में मैंने यह बताया था कि मनुष्य मरकर कैसे जाता है, कहाँ जाता है, कसे जन्म लेता है आदि आदि अब आगे सुनो

मन और चेतन्य अवस्था में भेद

मनुष्य का जीवन उसकी मनन शक्ति से होगा। जब बुद्धि पैदा होती है तब चेतन्य का ज्ञान होता है। यदि बुद्धि न हो तो उसका भान न होगा। मन है सूक्ष्म शरीर। यह मन ही काल है मन ही माया है। जब जीवात्मा ने जीवन में विचार से नहीं किन्तु अनुभव से ज्ञान प्राप्त कर लिया तो यह बहुत सा मरहला अवश्य हल हो जायगा मगर मन को पूर्ण दमन करने पर जो उसकी अपनी अवस्था बाकी रही जब तक उस अवस्था में वह स्वयं नहीं जायगा तब तक उसका आवागवन छूट नहीं सकता। ज्ञानियों को भी आवागवन हो जाता है। किन ज्ञानियों को? जो मनन शक्ति से अपने रूप का असली तौर से ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं मगर अपने स्वरूप का अनुभव नहीं करते। साधन से मन को खतम करने के

बाद जो अवस्था बाकी रह जाती है वह कहने सुनने का विषय नहीं। वह वर्णन में नहीं आता। वह चेतन अवस्था है। उसको अनुभव करो। लाख वेद पाठ करो प्रवचन सुनो, रामायण का पाठ करो अथवा और कोई पाठ करो। तुम पर वह अवस्था तब तक नहीं आयेगी जब तक तुम साधन करके अपने मन को निर्मल करते हुये मन को छोड़ न जाओ, मन को छोड़ने को यदि तुम केवल प्रकाश का ही साधन करते रहोगे तो ब्रह्म देश में जो चेतनता है वह मन की चेतनता है, वह रहती है। गरुड़ पुराण कहता है कि इसके आगे पार ब्रह्म और शब्द ब्रह्म में जाओ। यही बात राधास्वामी मत वाले कहते हैं कि शब्द योग के बिना स्व-स्वरूप का ज्ञान नहीं हो सकता। एक ज्ञान तो यह है कि बुद्धि से विश्वास कर लिया निर्णय कर लिया। दूसरा ज्ञान वह अनुभव ज्ञान है उसका रूप हो जाना। इसलिये सत्संग और साधन बताये गये हैं।

देखो! लाखों सत्संगी अपने कल्याण या ८४ से बचने को विशेषकर हिंदुओं में गुरुओं के साथ लगे हैं। मैं यह चाहता हूँ कि उनको सच्ची बात बता जाऊँ कि उनका कल्याण हो जाय। मैं यह नहीं चाहता कि फकीर चन्द पुत्र प० मस्ता-राम को गुरु मानो। इससे तुम्हारा कल्याण नहीं होगा। असली अवस्था तो निजस्वरूप है परम तत्व है, कबीर ने उसे अनामी, गुरु नानक ने उसे अकाल कहा है। सनातन धर्म में उसे शास्त्र कहते है कि सत को असत ने ढक रक्खा था। सत है प्राक्टय-असत वह अवस्था है जिसमें से तमाम रचना निकलती हैं। जो उसकी खोज करने जाता है वह अपना रूप खोजता है। वह क्या है? कोई नहीं कह सकता।

इष्ट का रूप-निराकार और साकार

इसलिये इस आवागवन से बचने को अपना इष्ट वह मानो जो सबसे ऊँचा है। मगर कई ऐसे हैं जो उस परमात्मा को सर्व व्यापक मानते हैं और कोई रूप नहीं बनाते। जैसे आर्य समाजी या इस्लाम धर्म वाले। मैं अपने अनुभव के आधार पर कहता हूँ कि जो मन के ख्याल से उस परम तत्व या खुदा को बेरूप बेरंग मानकर उपासना करते हैं वह यमराज के चक्र से बच नहीं सकते हैं। लोग कहते हैं कि तुम को ऐसा कहने का क्या हक है। मेरा हक है किसी के आधार पर वह है तुम्हारा अपना रोज का जीवन। यदि तुमने कोई इष्ट या आइडियल नहीं बनाया है जहाँ मन ठहर सके तो यह गुनावन में लगा रहेगा। निराकार पर वृत्ति ठहर ही नहीं सकती। अन्धेरे का ध्यान करो, मगर मन सोचने लग जायगा। इसलिये मालिक को जब मानो मानव रूप में मानता है। दाता दयाल महर्षि शिव ने कहा हुआ है कि सतस्वरूप को मानव रूप में मानो। यह सब इसलिये है कि मन को ठहराने को साकार का रूप है सगुण भक्ति है। बिना साकार रूप के मन ठहरेगा कैसे और किस के सहारे? यह बात सोचने समझने और अमल करने से समझ में आ जायेगी।

सुमिरन ध्यान की आवश्यकता

सुरत को ठहराने के लिये शब्द और प्रकाश है। जब तक तुम्हारा मन साथ है अर्थात सोच विचार और मनन है उस समय तक रूप का ध्यान और सुमिरन कभी न छोड़ो।

दुनियां वाले गृहस्थी जो दुनियां की आशाओं में है यदि वह हिंदू है तो चाहे वह राम को कृष्ण को, शिव को, पूजें मुसलमान हैं तो खुदा को पूजें, सिख गुरु नानक को पूजें। मैं इन बातों के रगड़े में नहीं पड़ता। मैंने तो आपको गुरु, सिद्धांत या नियम बना दिया। कई गृहस्थी ऐसे देखे गये कि जिन्होंने साकार रूप का साधन परमार्थ के ख्याल से छोड़ दिया। सुमिरन ध्यान छोड़ा। उनकी दुनियां बिगड़ गई। इसको स्पष्ट रूप से यों समझ लो कि तुम दुनियाँ में रहते हो। गृहस्थी हो, तुमको साँसारिक वस्तुओं की आवश्यकता रहती है। ये वस्तुयें तुमको संकल्प के दृढ़ या पक्का होने पर मिलती है यदि तुम संकल्प या मन के चक्र से ऊपर चले गये तो फिर साँसारिक दशा से उदासीनता आ जाने के कारण दुनियां नीरस हो जायेगी। यह अनुभव का विषय है। करके देख सकते हो या मेरी बातका विश्वास करलो, दातादयाल महर्षि 'शिव' का जीवन सामने है वह सत्पुरुष थे। उन्होंने 'लामकानियत में घर किया' ऐसे-२ शब्द कहे हैं। वे पिछली आयु में कहाँ गये ? लामकानियत में, अलख में, जहाँ दुनियाँ का ख्याल नहीं रहा। परिणाम यह हुआ कि धाम (राधास्वामी धाम) उजड़ गया। उनके हजारों शिष्य थे। मगर खाने को ढंग से नहीं मिलता था।

इसलिये कहे जाता हूँ कि उन लोगों को छोड़ कर जिन को परमार्थ की लालसा है अर्थात सांसारिक वस्तुओं की आवश्यकता या इच्छा नहीं है किसी को सुमिरन ध्यान नहीं छोड़ना चाहिये। पिछली आयु में छोड़ दे तो हानि नहीं। राधास्वामी मत में जनसाधारण को सुमिरन ध्यान, भजन तीनों का अभ्यास इकटठा बताया है। साधक केवल

शब्द का ही अभ्यास न करें। तीनों अभ्यास करें ताकि लोक भी न बिगड़े और पर लोक भी न बिगड़े। और पिछली अवस्था में चलकर लय होने का प्रयत्न करें।

ध्यान के साधन से इच्छा शक्ति (Will Power) बल वान हो जायेगा और जैसा जैसा सोचते रहोगे वैसो-२ तुम्हारी दशा होती रहेगी। इससे लोक भी बना सकते हो और परलोक भी।

जीवन यापन के दो मार्ग कहे गये है :—प्रवृति और निवृति। मैंने पहिले बताया है कि जिनको परमार्थ की लालसा है, जो दुनियाँ से उपराम हो चुके हैं और धन, संतान मान, बड़ाई की जिनको इच्छा नहीं रही है केवल वे ही निवृति मार्ग में चलें अन्यथा उनकी दुनियाँ बिगड़ जायगी। साथ ही यह भी बताया है कि प्रवृति मार्ग में सुमिरन ध्यान भजन करते हुये अपने आदर्श की ओर चला जाय। मन को एकाग्र करो मगर शुभ संकल्प रक्खो क्योंकि जब तुम अभ्यास करते हो तो जो वासनायें तुम्हारे अन्दर बैठी हुई हैं वह फुरती हैं। यदि विचार अच्छे हैं और शुभ नहीं हैं तो यह सुमिरन बजाय लाभ के हानिकारक होगा।

गुरु और सत्संग

इसलिये राधास्वामी दयाल ने कहा है कि इस चक्र से निकालने वाला है सतगुरु। जब तक पूर्ण पुरुष की संगत नहीं करोगे, ज्ञान नहीं मिलेगा। और न जीवन सुधरेगा। इसलिये कबीर मत या राधास्वामी मत में जो कुछ है गुरु है और सत्संग है। मैंने गुरु भक्ति और नाम भक्ति को इतना स्पष्ट कर दिया है कि भ्रम और शंकाओं की गुंजायश नहीं

रहीं। इस समय जो हमारे घरेलू राष्ट्रीय, धार्मिक और सामाजिक हालत है उस को ठीक करने को माँग व पूर्ति (Demand and Supply) के नियम के अनुसार जो मैं कहता हूँ उसे समझ लिया जाय तो कल्याण हो सकता है।

जो बात मैंने कहीं हैं वही कबीर साहब ने कही है। उसका प्रमाण कबीर की वाणी से देता हूँ :—

वारी जाऊँ सतगुरु के, मेरा किया भरम सब दूर ॥
चद चढ़ा कुल आलम देखे, मैं देखूं भ्रम दूर ॥
हुआ प्रकाश आस लगई दूजी, उगिया निर्मल नूर।
माया मोह तिमिर सब नासा, पाया हाल हजूर ॥
विषय विकार लार है जेता, जरि किया सब धूर।
पिया पियाला सुधि बुधि बिसरी, होगया चकना चूर ॥
हुआ अमर मरे नहिं कबहूँ, पाया जीवन मूर।
बन्धन कटा छूटिया जम से, किया दरस मंजूर ॥
ममता गई भई उर समत्ता, दुख सुख डारा दूर।
समझे बैनौ कहे नहिं आवे, भयो आनन्द भरपूर ॥
कहै कबर सुनो भाई साधो, बजिया निर्मल तूर ॥

गुरु क्या करता है ? वह सच्चा मार्ग बता देता है।

दाता दयाल (महर्षि शिव) का मैं बड़ा कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मेरा अपना भ्रम दूर कर दिया। मैं द्वन्द में फंसा था। जब उन्होंने देखा कि यह समझ नहीं सकता तो उन्होंने मुझे गुरु बना दिया। जो लोग मेरा ध्यान करते हैं और उनको जो अनुभव होते हैं कि मैं (फकीर) उनको अभ्यास में दवा बता देता हूँ और वह उससे अच्छे हो जाते है। तथा उनको संतान दे जाता हूँ मगर वह बताने वाला या देने वाला मैं नहीं होता

तो फिर मेरा पर्दा उठा या नहीं ! जब यह ज्ञान यह हो गया कि यह तो उसका अपना ही मन था तो मैं वहाँ रहने को विवश हुआ जहाँ मन नहीं होता। अब मैं मन के तरह तरह के संकल्प विकल्पों में फंस नहीं सकता। जिस व्यक्ति का मन तरह-तरह के ख्यालों में फसा है वही यमराज में जाता है। हमारा यमराज क्या करेगा ? बाणी (बारहमासा) में आगे लिखा है —

जो जो भजन भक्ति से चूके।
तिसके मुख जम पल पल थूके ।।
ऐसी कुगति होयगी सबकी
जो नहिं धारें सतगुरु अब की।
सतगुरु बिन कोई न बाचे।
नाम बिना चौरासी नाचे ।।
धन्य भाग्य हम सतगुरु पाया।
चढ़ी सुरत मन गगन समाया ।।

जो कष्ट हमको यमराज के यहाँ मिलते हैं उनका वर्णन गरुड पुराण में भी है और राधास्वामी दयाल की वाणी में भी है। मुझे सतगुरु मिल गये। यह मेरा धन्य भाग है। बड़ा भाग्यशाली है वह पुरुष जिसे सतगुरु मिल गये। या मिल जाय। चूंकि मैं अपने को सतगुरु कहता हूँ इसलिये इसका अर्थ यह नहीं कि फकीर पुत्र पं० मस्तराम मिल गया और उसका भाग्य धन्य हो गया। धन्य भाग इस तरह हो गया कि जब वह मेरे या किसी गुरु के सत्संग में जाकर सत्संग को सुनेगा, उनके वचनों को गुन गुन कर उसके सारांश को धारण करके उसके अनुसार चलेगा। यह है असली गुरु भक्ति और मन की सेवा मगर जो जीव निचली

श्रेणी के हैं उनको तन और धन की सेवा आवश्यक है। गुरु को तुम्हारे धन की आवश्यकता नहीं। स्वामी जी ने वाणी में कहा है :—

गुरु नहिं भूका तेरे धन का।
उन पै धन है भक्ति नाम का॥
पर तेरा उपकार करावें।
प्यासे भूके को दिलवावें॥

तथा—

गुरु को ऐसा चाहिये, शिष का कछू न लेय।
शिष को ऐसा चाहिये, गुरु का सब कुछ देय॥

ऐसे लोगों के लिये मानवता मन्दिर बनवाया हुआ है। उसमें बहुत सी विधवाओं की पेंशन लगाई हुई है। (श्री गिरधर सिंह वारंगल निवासी को संकेत करते हुये कहा) ऐ गिरधर सिंह तुमको मालिक इतना देगा कि कमी नहीं रहेगी। यदि आमदनी बढ़ जाय तो फ्री अस्पताल खोल देना।

देखो! मेरी स्त्री पैसा-२ करती रहती थी। मैं फकीर हूँ मैंने कभी पैसे की परवाह नहीं की। वह धीरे-धीरे जोड़ती रही। और मरते समय ३८७८ रुपये छोड़ गई। सोचता हूँ वह जोड़ जोड़ कर मर गयी। क्या साथ लेगई! कहा है—

खाय पकाय लुटाय कर, करले अपना काम।
चलती बिरियाँ रे नरा धर्म ही आवे काम॥

मगर इसका अर्थ यह नहीं कि आदमी अपनी कमाई का दुरुपयोग करें। व्यथ खर्च करें और नेक काम के लिये पैसा जोड़ें नहीं। अपने पैसे का सदुपयोग करो और वह यहीं है जो गुरु तुमको बताता रहे, मगर आजकल के गुरु लोभी

लालची होकर चेलों से धन छीनकर अपना काम बनाते हैं ऐसे गुरुओं से बचना चाहिये।

मन और धन की सेवा तो बतादी गई। अब रही तन की सेवा, तो वह भी गुरु की आज्ञानुसार निष्काम भाव से करनी चाहिये। तो गुरु भक्ति से क्या मिला? हमको समझ आ गई। अपने निज स्वरूप का ज्ञान हो गया, फिर यमराज का नाता छूट गया। इस रहस्य को सन्तों ने पहिले भी सैन बैन में कहा था मगर जो समझने वाले थे समझ गये। जो समझ नहीं सके। वह कोरे रह गये। मैं डण्डे मार हूँ अर्थात बात को स्पष्ट करके कह रहा हूँ। जो मेरा सत्संग सुनते हैं और केवल सत्संग की नीयत से आते हैं उनका बेड़ा पार है। राधास्वामी दयाल ने भी अपनी वाणी (माया संवाद) में ऐसा ही कहा है। वहाँ माया कहती है कि स्वामी जी आपने जीवों का रास्ता बड़ा सुगम कर दिया। यदि जीव तेरे हैं तो में भी तेरी हूँ। इस पर स्वामी जी का उत्तर हैं कि ऐ माया मैंने तेरे सब छल बल तोल लिये हैं। मेरा जीव तू नहीं लेजा सकती। वह सत पद जायेगा।

माया सम्वाद में स्वामी जी के उत्तर का भाव जो मैंने समझा है कि वह यह है कि जो उनके बचनों को समझेगा, सुनेगा, मनन करेगा और उन पर चलेगा वह माया के चक्र में नहीं फँस सकता। केवल राधास्वामी मत में शामिल होने अथवा राधास्वामी-राधास्वामी कह देने मात्र से काम नहीं निकल सकता। इसी तरह जिन्होंने ध्यान पूर्वक मेरा सत्संग किया है और रहस्य को समझा है उस पर मनन किया है वे मन के ख्यालों में नहीं फँस सकते। सत्संग से असली लाभ उन्ही को होता है जो परमार्थ की दृष्टि से सत्संग में आते हैं

गुरु को मानुष जान कर, भेड़ की चलते चाल।
वह बन्धन को क्यों तजें, व्यापे माया काल॥
पड़े योनि की खानी॥

गुरु नाम आदर्श का, गुरु है मन का इष्ट।
इष्ट आदर्श को ना लखें, समझो उसे कनिष्ट॥
बात बूझे मन मानी॥

गुरु भाव घट में रहे, अघट सुघट की खान।
जिसे समझ ऐसी नहीं, वह हैं मूढ़ समान॥
नहिं गुरु रूप पिछानी॥

चेला तो चित में रहे, गुरु चित के आकाश।
अपने में दोनों लखे, वही गुरु का दास॥
रहे गुरु पद घट ठानी॥

सुरत शिष्य गुरु शब्द है, शब्द गुरु का रूप।
शब्द गुरु की परख बिन, डूबे भरम के कूप॥
नर जन्म गंवानी॥

गुरु ज्ञान का तत्व है, गुरु ज्ञान का सार।
गुरु मत गुरु गम जो लखें, फिर नहिं भव भय भार॥
कमल जैसी गति आनी॥

राधास्वामी सतगुरु सन्त ने, कही बात समझाय।
जो नहिं माने वचन को, उरझ उरझ उरझाय॥
कौन समझे यह बानी॥

देखो! इस शब्द में दाता दयाल (महर्षि शिव) ने स्पष्ट रूप से कहा है—

गुरु नाम आदर्श का, गुरु है मन का इष्ट।

इसलिये गुरु को जब तक दाढ़ी मूंछ वाला 'फकीर'

तिनको सावन काला नागा
डस डस खावे लागे आगा ॥

सावन मास शरीर का जीवन है। जिसने इसमें ज्ञान प्राप्त कर लिया, बात समझ में आगई वह यमराज-धर्मराज से बच जायेगा।

बाहर वर्षा रिम झिम होई।
घट में उनके अग्नि समोई॥
अग्नि लगी मानो तन मन फूँका।
उनके भावे पड़ गया सूखा॥

बाहर ठण्डक है मगर अन्तर में चिन्ता रूपी अग्नि सता रही है। देखो! बड़े बड़े सेठ, धनी मानी, मन्त्री राजे दुखी हैं अशान्त हैं। उनको कोई न कोई चिन्ता फिक्र लगी हुई है। किसी को धनमान की चिन्ता है, तो किसी का ईश्वर मिलने की चिन्ता है। किसी को आवागवन से बचने की चिन्ता है, किसी को जप-तप की। कहा है—

चिन्ता बुरी बलाय है, जीवन ही को खाय।

फिर इस चिन्ता का अन्त कब होता है? आगे की कड़ी सुनो—

पिया बिन सावन कैसा आया।
जेठ तपन जस जीव लखाया॥

जीव जले विरह अग्नि में, क्योंकर शीतल होय।
बिन वर्षा पिया बचन के, गई तरावत खोय॥
जिनको कंथ मिलाप है, तिन मुख बरसत नूर।
घट शीतल हिरदा सुखी, बाजे अनहद तूर॥

पिया है क्या? वह अवस्था जहां स्त्री पुरुष मिलकर एक

हो जाते है। कोई चिन्ता नहीं रहती। वैसे ही मनुष्य आत्मा में रहकर चिन्ता फिक्र नहीं करता। निर्भय तथा अडोल हो जाता है उसको ही पिया का मिलाप है, मगर यह मार्ग साँसारिक वासनाओं में ग्रस्त लोगों के लिये नही है।

इसलिये इष्ट पद क्या है ? निर्भयपना, अडोलपना, निर्वैरपना। जो निर्भय रहता है, न स्वयं डरता है न दूसरों को डराता है, अडोल रहता है चिन्ता फिक्र उसे चलायमान नही करते। किसी से न द्वेष ईर्ष्या करता है न बैर करता है। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये साधन और सत्संग है। तथा कुछ ज्ञान कुछ अनुभव है। इस पर दातादयाल (महर्षि शिव) का एक शब्द सुन लो जिससे मेरे कथन की पुष्टि होती है।

जिसके मन नहिं चिन्ता व्यापे, जग में वही है दास फकीर।
अभय रहे चित गुरु पद राखे, धीर भीर गम्भीर॥
शान्त भाव व्यवहार परमारथ, कभी न होय दिलगीर।
अपनी पीर न उर में साले, लखे पराई पीर॥
पर की पीर न जिसे सतावे, सो अधरम बेपीर॥
अपना रूप संभाले पल पल, काट मोह जन्जीर॥
यह फकीर है गुरु का प्यारा, महावीर चित धीर।
चाह गई चिन्ता सब भागी, आया भव निधि तीर॥
हंस रूप धर त्याग नीर को, गह लिया ज्ञान का क्षीर।
राधास्वामी गुरु का सच्चा बालक, पहिरे विराग का चीर।
तन के रहते मुक्त विदेही, सहें न द्वन्द शरीर॥

—x—

चतुर्थ सत्संग

(हनम् कुण्डा-२०-१-६४)

मैंने पिछले सत्संग में जीव की उत्पत्ति तथा मरने के बाद कहाँ जाता है, यमराज आदि से बचने का क्या उपाय है, आदि बातों का वर्णन किया है। मेरे इस कथन का कुछ ध्येय है और वह यह है कि जीवों को असलियत का ज्ञान हो जाय और उनको जीवन में शांति मिल जाय। वही बात कबीर मत, राधास्वामी मत में है और वही सनातन धर्म में है। अब उससे आगे कहना चाहता हूँ।

शब्द और प्रकाश के परे-अजर अमर पद

वह क्या ? माना कि सुमिनन ध्यान करने से यमराज के चक्र से बचाव हो गया। शब्द और प्रकाश रूप होने से ८४ से बचाव हो गया। यदि ८४ से बच गये तो फिर कहाँ रहोगे यहाँ गरुड़ पुराण चुप है। इससे आगे का कोई वर्णन नहीं करता है। इससे आगे सन्तों का मार्ग है। ८४ चक्र से बचने के बाद जो हमारा असली घर हैं वहाँ रहें।

सब जानते है कि इस घर में सब अवतार, पीर, पैगम्बर, सन्त, महात्मा, कबीर राधास्वामी दयाल आदि सब चले गये, कबीर साहब उस देश की बावत अपने शब्द में क्या कहते हैं सुनो—

हौ तुम हंसा सत्त लोक के, पेड़ काल बस आई हो।
मनै सरूपी देव निरन्जन, तुम्हें राखि भरमाई हो॥
पाँच पचीस तीन कै पिंजरा, तेहि माँ राखि छिपाई हो।
तुमको विसरि गई सुधि घर की, महिमा अपन जनाई हो।

हमारी अनसमझी या अज्ञान के कारण हैं दूर हो जाँय।
कबीर ने इस शब्द में —

'हौ हंसा तुम सत्त लोक के, पडे काल बस आई हो'

कितना स्पष्ट कहा है। अन्य सन्तों और शास्त्रों के भी अनुसार हम, तुम अजर, अमर होते हुये इस पिंड में आये हुये हैं। वह कौन वस्तु या शक्ति है जो हमें इस पिंड में लाई हुई है। मैं अन्ध विश्वासी नहीं हूँ। जो कबीर राधास्वामी दयाल ने कहा मैंने इन बातों के जानने में उम्र खोदी।

मेरा दावा कोई नहीं हैं। मेरा विश्वास है और मेरा अनुभव है। एक व्यक्ति जिसका जिक्र अभी किया उसको पाकिस्तान में फकीरचन्द ने प्रत्यक्ष दर्शन दिये और उसको गाइड किया तथा यादराम (टप्पल वासी) ने जमुना नदी के किनारे एक कबीर पन्थी साधु के साथ फकीरचन्द को देखा तो मैं तो कहीं गया नही फिर यह फकीर चन्द को बनाने वाला कौन था? यह इनका मन था। इनको सनातन धर्म में छाया पुरुष कहते हैं। इसी प्रकार ऐसा कोई आदि पुरुष है जिसने अपने ख्याल से पहिला आदमी बनाया।

विराट पुरुष सृष्टि की उत्पत्ति

वह एक बड़ी शक्ति है। उसका शरीर है विराट पुरुष पहाड़ जिसकी हड्डियां हैं। सूर्य चन्द्रमा जिसके नेत्र हैं। नदियाँ नाड़ी हैं। ऐसा एक महान पुरुष है जिसे काल पुरूष या कर्ता पुरूष कहते हैं। उसने इच्छा की कि मैं एक से अनेक हों जाऊँ और उसने अपने अन्तर से दुनियाँ बनादी। जिस

तरह लोग अपने संकल्प से मुझे बनाकर काम ले लेते हैं उसी तरह कर्ता पुरु ने अपने संकल्प से काम लिया हुआ है और दुनियाँ बनाई हुई है।

परिणाम क्या निकला ? लोगों के जीवन को देखो। क्या कोई सुखी है ? इस रचना में जानवर पैदा होते हैं साथ ही मारे जाते हैं। आदमी पैदा होते और मरते हैं और दुख सुख उठाते हैं। हर रोज लड़ाई झगड़े होते रहते हैं। लोग पिटते और कुटते हैं। दुखी होते है मगर इस दुनियां को छोड़ने को तैयार नहीं। क्या विचित्र खेल रचा है। यह मन काल है कर्ता पुरुष है। इसने दुनियाँ को रचा है। मगर जब यह दुनियाँ बनी तब सब कुछ बन गया मगर अपूर्ण थी। जो जो वस्तु इसमें आई, जिसने आनन्द उठाया, वह है सुरत हमारी तवज्जह। हमारी तवज्जह हम है, हम सतलोक के वासी हैं। वह सुरत कैसे आई। मेरी बुद्धि काम नहीं करती। सन्तों ने यह कहा है कि जब यह रचना बनी तब अपूर्ण थी। कैसे ? कि उसमें खेलने वाला नहीं था या सुरत नहीं थी। तप किया फिर सुरत (Energy) आई, जिससे मनुष्य क्या कुछ नहीं कर सकता। दूसरा खुदा बना है। क्या मनुष्य की शक्ति कम है। आज के युग में अमेरिका यदि चाहे तो ८-१० बम में सर्वनाश कर देगा। इसलिये मानव चोला मुख्य है बशर्ते कि उसे गुरु मिल जाय। यदि अमेरिका आदि बिगड़ जाय तो नाश कर दे। यह तीसरी वस्तु कैसे आई, इसके हल करने में मैं फेल हूं। हाँ जो सुरत है वह देह में आकर सुख भोगती है और इस मन ने इसे फँसा रक्खा है। यही बात कबीर ने अपने शब्दों में कहीं।

मनै सरूपी देव निरन्जन, तुम्हे राखि भरमाई हो।
पांच पचीस तीन कै पिंजरा, तेहि मां राखि छिपाई हो॥

तुमको विसरि गई सुधि घर की, महिमा अपन जनाई हो।
निरङ्कार निरगुन है माया, तुमको नाच नचाई हो॥

मन फँसाने वाला व तारने वाला दोनों है

देखो ! यह तुम्हारा मन ही है जिसने तुम्हे भरमा रक्खा है और तुम्हारा रक्षक और भक्षक बना हुआ है। दुनियाँ को दुःखी और सुखी बना रक्खा है। इसलिये इसे गुरु के अर्पण कर दो तो शिव संकल्प के नियम के अनुसार सुधर सकता है। जो जीवन को सुधार सकता है यह मन ही है। मन से आवागवन में आते हो और इसी से बचते हो। मन ही साथी है। यदि साथी बुरा है तो अच्छे से अच्छा भी है। बिना मन के न दुनियां से पार हो सकते हो, न फँस सकते हो। यही मन इसमें फंसाने वाला और निकालने वाला है।

इस मन से निकालने को हमने सतगुरु पाया है जिन्होंने हमको हमारे असली घर का रास्ता बताया। वह रास्ता क्या है ? वह है सुमिरन ध्यान। सुमिरन ध्यान से यमराज से निकलोगे और शब्द और प्रकाश से वहाँ जाओगे जिससे ८४ के चक्र से बचोगे। फिर ८४ के बाद जहां रहना है उसका नाम है सतलोक।

फकीरा ! न कर गुमराह दुनियां को, दुनियाँ पागल नहो जाये
जैसे तूने पढ़ पढ़ वाणी उम्र गँवाई खोज खोज उमर बितावे।
यह समझ कर कोई हो खोजी, फकीर अपना अनुभव बतावे।
ताते कोई हो खोजी, मेरी बात समझ चितलावे॥

गुरु सुमिरन ध्यान भजन बताता है साथ ही मनुष्य की बुद्धि को निश्चयात्मक बना देता है। काम करने की लाइन बता देता है कि इस तरह चल। तेरा परिणाम यह होगा।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र)

(केन्द्रीय) अधिनियम [redacted]

अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक क. नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ नव०, १९८७

सुधा मित्तल

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर
अलीगढ़—२०२००१ (उ० प्र०)

अवैतनिक सहायक सम्पादक
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक
श्रीमती सुधा मीतल

क संख्या— 170

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu
Hanmandlu General Stores
Vt P.O. Banswada Mandal
Nizamabad.
503187

मुद्रक: श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराज नगर, अलीगढ़